विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं एवं शीर्षक .	**P5: भाषाविज्ञान**
इकाई सं एवं शीर्षक .	**M3: स्वनविज्ञान : परिभाषा एवं स्वरूप**
इकाई टैग	**HND_P5_M3**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
इकाई लेखक-	**प्रो. प्रमोद कुमार पाण्डेय** प्रोफेसर, भाषा विज्ञान केंद्र, भाषा, साहित्य एवं संस्कृति विद्यापीठ जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय, नई दिल्ली 110067 ईमेल : pkspandey@yahoo.com; pkspandey@gmail.com
इकाई समीक्षक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
भाषा संपादक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. भाषा मुख्यत: वाचिक रूप में
4. भाषाई विश्लेषण के स्तर के रूप में
5. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप जान सकेंगे कि -

- स्वनविज्ञान की अवधारणा क्या है?
- भाषा का मूल वाचिक रूप किस प्रकार का होता है।
- स्वनविज्ञान के प्रकार कौन कौन से है।
- ध्वनि का अध्ययन कितने स्तरों पर किया जाता है।

2. प्रस्तावना

जब भी हम कोई नई, अनजानी भाषा सुनते हैं तो हम उसके शब्दों के, वाक्यों के अर्थ को नही समझ पाते। लेकिन जो बोला जा रहा है, वह कोई भाषा है, इसमें हमें कोई संदेह नहीं होता। इससे यह साबित होता है कि विभिन्न ध्वनियों को सुनकर समझने की, बोलने की और किसी भाषा से उन्हें जोड़ने की क्षमता हमारे अंदर जन्मजात होती है। ध्वनि का यही ज्ञान इस पाठ का विषय है।

3. भाषा मुख्यत: वाचिक रूप में

भाषा को हम मूलत: लेखन से जोड़ते हैं या लिखित भाषा को हम प्राथमिकता देते हैं। लेकिन निरीक्षण से यह पाया गया है कि भाषा में प्राथमिकता उसके लिखित रूप की नहीं हैं बल्कि स्थिति ठीक उसके विपरीत है। भाषा में प्राथमिकता बोलने की है और लेखन द्वितीयक (Secondary) है। निम्न तथ्यों से इसे समझा जा सकता है:

(क) भाषा सार्वभौमिक है जबकि लेखन कुछ समुदायों (Communities) तक ही सीमित है। विश्व में, खासतौर से एशिया, अफ्रीका तथा ऑस्ट्रेलिया में ऐसी अनेक जनजातियाँ हैं जहाँ किसी भी लिपि का इस्तेरमाल नहीं होता। ऐसा कह सकते हैं कि यहाँ लिखित भाषा का कोई प्रचलन नहीं है। भारत में भी कई जनजातियाँ, जैसे अंडमान द्वीप की 'जारवा' और 'ओंगे' जनजाति की अपनी कोई लिपि नहीं है। अर्थात ये भाषाएं सिर्फ बोली जाती हैं। इन जनजातियों के लोग देवनागरी लिपि में अब लिखना और पढ़ना सीख रहे हैं।

(ख) पढ़े लिखे और शिक्षित समाज में भी हम लिखने से बहुत पहले बोलना सीखते हैं।

(ग) मनुष्य के विकास के इतिहास को देखें तो पता चलता है कि मनुष्य ने भाषा बोलना, लिखने के बहुत पहले ही सीख लिया था। लिपि या लिखने की प्रक्रिया बोलने की तुलना में बहुत बाद की है। जीव वैज्ञानिकों के अनुसार बोली जाने वाली भाषा का इतिहास 50,000 साल पुराना है जबकि लिपि का सिर्फ 3,000 साल। (भारतीय परंपरा में यह बात मान्य नहीं है। लेकिन इसमें कोई विवाद नहीं कि लिपि वाचिक भाषा के बहुत बाद जनित हुई। बोलना हम स्वाभाविक तरह से सीख लेते हैं। छोटे बच्चों को माता-पिता बोलना सिखाते जरूर हैं। न भी सिखाएं तो भी बच्चा बोलना तो सीख ही लेता है। लेकिन लिखने की शिक्षा देनी पड़ती है।

इस तरह के अनेक तथ्य यह सिद्ध करते हैं कि मनुष्य को 'बोलने और लिखने में' बोलना अपेक्षाकृत स्वाभाविक रूप से आता है।

स्वनविज्ञान के अध्ययन में यह आवश्यक है कि हम ध्वनि की प्रक्रिया (Phenomenon) और इकाइयों (Units) के अंतर को समझ लें। इन्हें दो प्रकारों के रूप में जाना जाता है खंडात्मक (Segmental) और अधिखंडात्मक (Suprasegmental)।

खंडात्मक इकाइयाँ 'स्वर' और 'व्यंजन' होती हैं। 'स्वर' और 'व्यंजन' तो हम सब जानते हैं। 'स्वर' वह ध्वनि है जो मुख-विवर (Oral cavity) में बिना किसी अवरोध के निकलती है। उदाहरण -'अ', 'ओ'।
'व्यंजन' वह ध्वनि है जिसकी उत्पत्ति के समय मुखविवर में अवरोध होता है। जैसे-'द्', 'ब्' ।

खंडात्मक प्रकियाएँ एकल खंडों से संबंध रखती हैं। जैसे- 'अ', 'ड्'। दो स्व'रों के बीच जब 'ड्' आता है तो वह 'ड्' हो जाता है। इस प्रक्रिया को उत्क्षिप्तीकरण (Flapping) कहते हैं। यह प्रक्रिया एकल ध्वानि से संबंध रखती है। जैसे - संस्कृत में, 'अघोष' व्यंजन, दो स्वरों के बीच में आते हैं तो वह 'घोष' हो जाते हैं–

सत् + आचार = सदाचार
वाक् + ईश = वागीश

इस प्रक्रिया को घोषीकरण (Voicing) कहते हैं। उत्क्षिप्तीहकरण और घोषीकरण प्रक्रियाएँ एकल खंडों से संबंध रखती हैं

ड् – ड्
त् – द्

स्वर और व्यंजन के अलावा वाक् में ऐसी प्रक्रियाएँ भी होती हैं जो एक साथ कई खंडों से संबंध रखती हैं। इसीलिए इन्हें अधिखंडात्मक कहा जाता हैं।

एक अधिखंडात्मक स्वनगुण तान (Tone) है। एक शब्द के कई अलग अर्थों को बताने के लिए अलग सुरों के उपयोग को तान कहते है। उन भाषाओं को जिनमें एक शब्द के अनेक अर्थों को बताने के लिए कई अलग सुरों (Pitches) का उपयोग किया जाता है, तान भाषा कहते हैं। तान भाषा का सबसे अच्छा उदाहरण चीनी भाषा है। उस भाषा में ऐसे अनेक शब्द हैं जिनमें स्वर और व्यंजन तो एक से ही हैं, लेकिन सुर अलग हैं। जैसे- 'मा'। इसका चार अलग तरह से किया गया उच्चारण चार अलग अर्थ - 'माता', 'डाँट' 'भाग', 'घोड़ा' बताता है। भारतीय-आर्य भाषा, पंजाबी में विकसित सुर हैं। जैसे- 'कर' शब्द- को एक तरह से उच्चारित करें तो उसका मतलब 'करना' (किया) होता है तो दूसरी तरह से 'घर'।

4. भाषाई विश्लेषण के स्तर के रूप में

स्वनविज्ञान और स्वनिमविज्ञान

ध्वनि का अध्ययन दो स्तरों पर किया जाता है –
(क) स्वनविज्ञान (Phonetics) और (ख) स्वनिमविज्ञान (Phonemics) स्वनविज्ञान का उद्देश्य किसी भी ध्वनि के भौतिक तथ्य– उच्चारण (मुख के अंदर), संचरण या प्रसारण (हवा में), और ग्रहण या प्रतिग्रह (कान और मस्तिष्क के द्वारा) का निरूपण करना हैं। ये भौतिक तत्व किसी भी शब्द में ध्वनि के स्वरूप का सामान्यीकरण करने में सहायक होते हैं। उदाहरण स्वरूप–'प्' और 'फ्'। ये दोनों ध्वनियाँ अंग्रेजी और हिंदी भाषियों की बोलियों में पाई

जाती है। इनका भौतिक स्वरूप दोनों भाषाओं में लगभग एक-सा ही है। लेकिन अंग्रजी में, किसी शब्द के उच्चारण में ये ध्वनियाँ यदि पारस्परिक रूप से बदल जाएँ, तो भी शब्द के अर्थ पर उसका असर नहीं पड़ता। अत: ये ध्वनियाँ एक दूसरे का प्रकार समझी जाती हैं, अलग नहीं। हिंदी भाषा मे इन ध्वनियों के अलग प्रयोग से शब्दों का अर्थ बदल जाता है। अत: ये एक ध्वनि का प्रकार नहीं, अलग ध्वनियाँ मानी जाती हैं।

स्वनविज्ञान और स्वनिमविज्ञान का दूसरा अंतर भी इन्हीं उदाहरणों से समझा जा सकता है। 'प्' और 'फ्' के ध्वन्यात्मक वर्णन इनके भौतिक स्वरूप को दर्शाते हैं जो कि लगभग समान हैं, लेकिन इनका स्वनिमवैज्ञानिक वर्णन भिन्न होगा क्योंकि इन ध्वनियों का संबंध अलग है। अंग्रेजी में इन ध्वनियों का स्वरूप परिपूरक होता है। शब्दों में कई संदर्भों में ये उपस्थित होती हैं। 'फ्' ध्वनि हमेशा बलाघातित अक्षर (Stressed Syllable) में होती है जबकि 'प' बलाघातित अक्षर में कभी नहीं होता। हिंदी में ये ध्वनियाँ शब्दों के शुरू में भी होती हैं। तब शब्द का अर्थ बदल जाता है। जैसे– पल, फल।

जैसा कि पहले बताया गया है, ध्वनि के भौतिक रूप के अध्ययन के तीन पक्ष हैं – (1) उच्चारण, (2) प्रसारण, (3) प्रतिग्रहण। तदनुसार स्वनविज्ञान के भी तीन भाग हैं –

(1) उच्चारणात्मक स्वनविज्ञान (Articulatory Phonetics)
(2) भौतिक स्वनविज्ञान (Acoustic Phonetics)
(3) श्रवणात्मक स्वनविज्ञान (Auditory Phonetics)

इन तीनों भागों के अध्ययन से ध्वनियों के बारे में महत्वपूर्ण सूचनाएँ प्राप्त होती है। उदाहरण के द्वारा इन्हें समझा जा सकता है। सबसे पहले हम **उच्चारणात्मक स्वनविज्ञान** को लेते हैं। उदाहरणत: 'काम'। इस शब्द में तीन ध्वनियाँ है– 'क्', 'आ', 'म्'। (ध्यान रहे कि लिखित देवनागरी में प्रयुक्त अक्षर की अवधारणा, ध्वनि से भिन्न होती है और यहाँ हम ध्वनि की चर्चा कर रहे हैं।

ध्वनियों के उच्चारण में कौन से करण (Articulators) किस प्रकार से प्रयुक्त होते हैं, इसके अध्ययन के आधार पर स्वनिक नामपत्र (Phonetic label) का उपयोग होता है। ध्वनियाँ बड़े या छोटे समूह में हो सकती हैं। जैसे - प्, ब्, त्, द् , क् ,ग् । इन्हें स्फोट (Plosives) कहते हैं। उनमें से प्, त्, क्, एक छोटा समूह है जिसे हम 'अघोष स्फोट कहते हैं। इसी प्रकार से हम इ, ई, उ, ऊ, को उच्च संवृत स्वर (High Close Vowel) कहते हैं। ये नामपत्र (Label) उच्चारण के मुख्य गुणों पर आधारित हैं। इस बात पर खास ध्यान देना जरूरी होता है कि ये नामपत्र सभी प्रकार की ध्वनियों का वर्णन करते हैं। दो भिन्न ध्वनियाँ एक नामपत्र से नहीं जानी जा सकती हैं । जैसे- हमें प्, त्, क्, को अलग करना होगा, उसी प्रकार हमें इ, ई, उ, ऊ, को अलग करना होगा। उदाहरणत: हिंदी के प्, फ्, ब्, भ्, ध्वनियों के लिए चतुर्नामिक नामपत्र (Four-term Label) की आवश्यककता होगी -

प - अल्पप्राण, अघोष, ओष्ठ्य, स्फोट
फ - महाप्राण, अघोष, ओष्ठ्य, स्फोट
ब - अल्पप्राण, सघोष, ओष्ठ्य, स्फोट
भ - महाप्राण, सघोष, ओष्ठ्य, स्फोट

उच्चारणात्मक स्वनविज्ञान भाषा ध्वनियों की उच्चारण-प्रक्रिया का अध्ययन करता है। इसमें उच्चारण में प्रयुक्त करण अर्थात वह चल अवयव जो ध्वनियों के उच्चारण के समय विभिन्न स्थितियाँ ग्रहण करते हैं। यथा- जिह्वा और ओष्ठ आदि तथा उच्चारण स्थान अर्थात वह अचल उच्चारण अवयव जिसकी ओर करण या तो अग्रसर होता है या जिसका वह स्पर्श करता है, के आधार पर व्यंजनों का वर्णन और वर्गीकरण किया जाता है। संस्कृत व्याकरण ग्रंथों के अनुसार करण चल हैं और स्थान अचल- 'यद्उपक्रम्यते तत्स्थानम्। येनोपक्रम्यते तत्करणम्'। इसी प्रकार करण किस प्रकार उच्चारण प्रक्रिया में प्रयुक्त होता है और श्वास के मार्ग में किस प्रकार का संकीर्णन करता है, यह भी उच्चारण प्रयत्न के रूप में व्यंजनों के वर्णन और वर्गीकरण का आधार बनता है। उच्चारण प्रक्रिया में प्रयुक्त करणों और उच्चारण स्थानों की जानकारी के लिए वागवयवों या वाग्यंत्र से परिचित होना आवश्यक है -

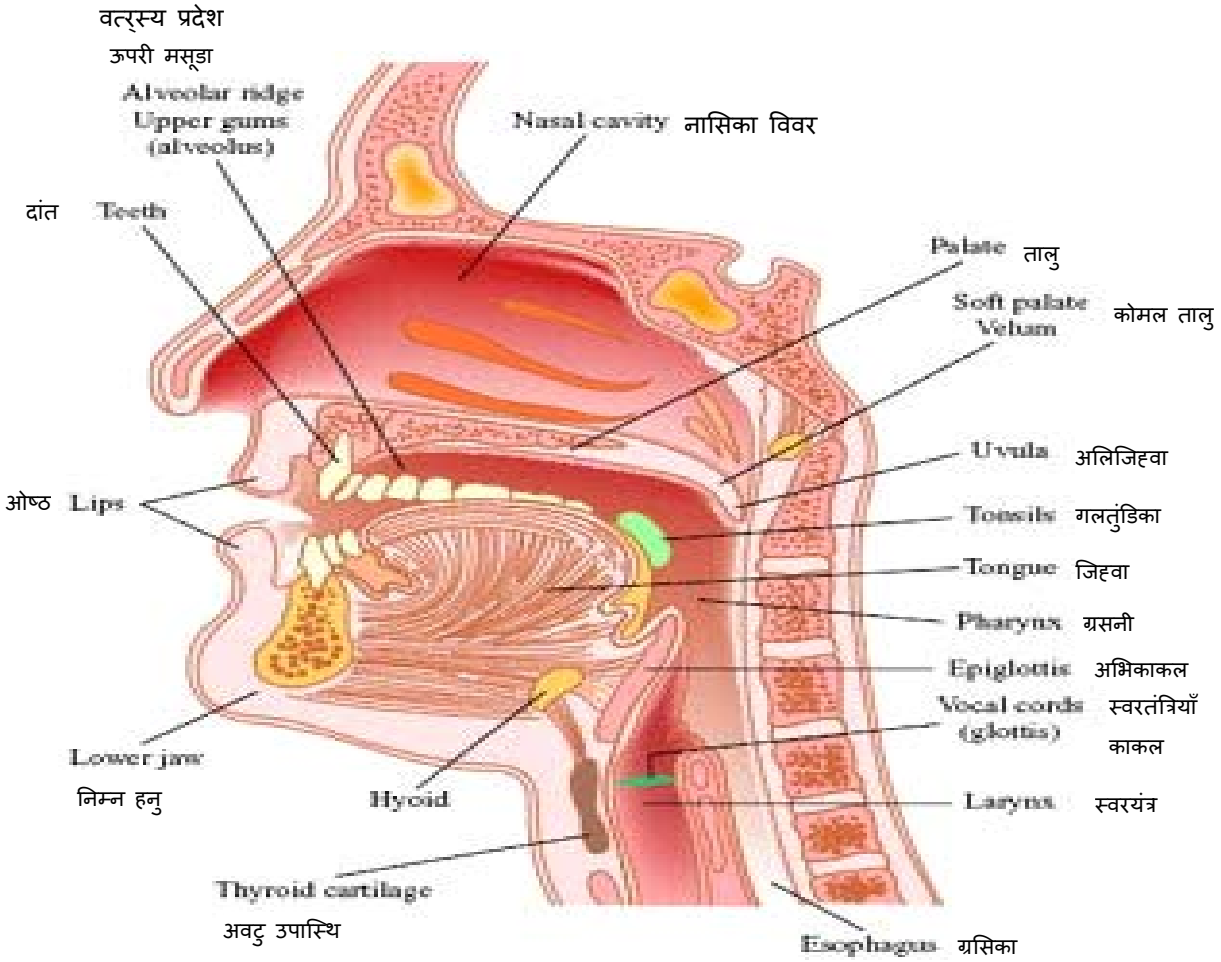
वत्स्य प्रदेश
ऊपरी मसूड़ा
Alveolar ridge
Upper gums
(alveolus)
Nasal cavity नासिका विवर
दांत Teeth
Palate तालु
Soft palate
Velum
कोमल तालु
Uvula अलिजिह्वा
ओष्ठ Lips
Tonsils गलतुंडिका
Tongue जिह्वा
Pharynx ग्रसनी
Epiglottis अभिकाकल
Vocal cords
(glottis)
स्वरतंत्रियाँ
काकल
Lower jaw
निम्न हनु
Hyoid
Larynx स्वरयंत्र
Thyroid cartilage
अवटु उपास्थि
Esophagus ग्रसिका

आपके सामने वाग्यंत्र का चित्र प्रदर्शित है। इस चित्र के निचले भाग में आप देख सकते हैं कि मुख की दिशा में आगे की ओर श्वास नलिका है, जिसमें से होकर श्वास फेफड़ों में पहुँचती है और उसी से प्रश्वास के रूप में बाहर निकलती है। भाषाओं की अधिकांश व्यंजन ध्वनियाँ प्रश्वास को बाधित करके ही उत्पन्न की जाती हैं।

श्वास नलिका के पीछे भोजन नलिका है, जो आमाशय तक जाती है। श्वास नलिका और भोजन नलिका को एक दीवाल अलगाती है। भोजन नलिका के विवर के साथ श्वास नलिका की ओर उन्मुख एक छोटी-सी जिह्वा है, जिसे अभिकाकल कहते हैं। भोजन या पानी आदि ग्रहण करते समय अभिकाकल श्वास नलिका को बंद कर देता है ताकि भोजन या पानी श्वास नलिका में न जा सके।

अभिकाकल से कुछ नीचे ध्वनि उत्पन्न करने वाला एक प्रधान अवयव, स्वरयंत्र है। स्वरयंत्र में पतली झिल्ली से बने दो परदे हैं, जिन्हें स्वरतंत्रियाँ या घोषतंत्रियाँ कहा जाता है। स्वरतंत्रियों के बीच के खुले भाग को स्वरयंत्रमुख या काकल कहते हैं। श्वास लेने की सामान्य अवस्था में या बोलते समय श्वास काकल से होकर ही आती-जाती है। स्वरतंत्रियों की विभिन्न स्थितियों के परिणामस्वरूप काकल के विभिन्न आकार ग्रहण करने से ही अघोष, घोष, मर्मर, काकलरंजन, फुसफुसाहट और काकल्य स्पर्श की उत्पत्ति होती है।

अभिकाकल के ऊपर स्थित ग्रसनी को संकीर्ण कर ग्रसनीय व्यंजन का उच्चारण किया जाता है। ग्रसनी के ऊपर एक खाली स्थान है जहाँ से आगे दो विवर हैं मुखविवर और नासिका विवर। जिस प्रकार भोजन नलिका के साथ श्वास नलिका की ओर झुकी हुई छोटी-सी जीभ अभिकाकल है, उसी प्रकार इस खाली स्थान के ऊपर मुख विवर और नासिका विवर के मार्गों के बीच झूलती हुई एक छोटी-सी जीभ के आकार का एक पिंड है जिसे अलिजिह्वा कहते हैं। अभिकाकल की भाँति यह भी कोमलतालु के साथ नासिका विवर के मार्ग को पूर्णतः या आंशिक रूप से बंद कर देती है। बोलते समय इसके शिथिल रहने की स्थिति में नासिका विवर खुला रहता है और नासिक्य व्यंजनों का उच्चारण होता है जबकि इसके आंशिक रूप से शिथिल रहने की स्थिति में अनुनासिक स्वरों का उच्चारण होता है। कोमलतालु के साथ इसके तने रहने पर नासिका विवर बंद हो जाता है और मौखिक ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। इसके अतिरिक्त अलिजिह्वा अलिजिह्वीय व्यंजन के उच्चारण में भी प्रयुक्त होती है।

मुख विवर में ऊपर की ओर प्रश्वास के मार्ग में क्रमशः कोमलतालु, तालु, वर्त्स्यप्रदेश, दाँत और ओष्ठ है। मुखविवर के निचले भाग में जिह्वा है जिसे ध्वनियों के वर्णन की सुविधा के लिए क्रमशः जिह्वामूल, जिह्वापश्च, जिह्वामध्य, जिह्वाग्र और जिह्वानोक कहा जाता है। जिह्वा प्रमुख करण के रूप में मुखविवर के ऊपरी भाग के विभिन्न स्थानों को स्पर्श कर या उनकी ओर विभिन्न प्रकार से अग्रसर होकर विभिन्न ध्वनियों का उत्पादन करती है।

मुखविवर के निचले भाग में जिह्वा के बाद क्रमशः नीचे के दाँत और ओष्ठ हैं। ध्वनियों के उत्पादन में ऊपर के दाँतों का ही अधिक प्रयोग होता है। नीचे का ओष्ट और दाँत करण के रूप में कार्य करते हैं।

भौतिक स्वनविज्ञान (Acoustic Phonetics)

ध्वनियों के उच्चारणात्मक अभिलक्षणों (Articulatory Features) की तरह भौतिक अभिलक्षण (Acoustic features) भी होते हैं जो उन्हें एक दूसरे से भिन्न करते हैं। ये गुण हवा के भार में जो छोटे बदलाव होते हैं, उनसे

संबंध रखते हैं। उन विभेदों (Variants) को हमारे कान अनुभव करते हैं जिनका हम ध्वनि स्पेक्ट्रोग्राफ (Sound Spectrograph) और ऑसिलोग्राफ (Oscillograph) द्वारा अध्ययन करते हैं। ये जो बदलाव हैं, इनमें प्रमुख हैं मूल आवृत्ति (Fundamental Frequency), आयाम (Amplitude) और आवृत्ति बैंड (Formants)। मूल आवृत्ति बैंड हवा के भार की आवृत्तियों (Cycles) के दोहराव होते है। यह हर व्यक्ति का अपना होता है। इस प्रकार पुरुष, स्त्री और उनमें वयस्क और अवयस्क के भी प्रशस्त विस्तार (Broad Range) होते हैं। वयस्क पुरुष में ध्वनियों की मूल आवृत्ति 50-155 आवृत्ति प्रति सेकंड होती है जिन्हें 'हर्ट्ज' (Hz) कहते हैं। महिलाओं में ज्यादातर 765 -255 (Hz) होते हैं और 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों में 400-600 (Hz) पाए जाते हैं। शास्त्रीय संगीत में विभिन्न रागों को अलग-अलग मूल आवृत्तियों में गाया जाता है। गायक इन्हें अपनी मूल आवृत्तियों के अनुसार प्रस्तुत करते हैं।

मूल आवृत्ति के अलावा हवा के भार में अधिकता और कमी से भी ध्वनियाँ अलग होती हैं जिन्हें वायुकण (Air Particles) के विश्राम बिंदु (Point of Rest) से अधिकतम दूरी के आधार पर मापा जाता है। इस दूरी के विस्तार को आयाम (Amplitude) कहते हैं जिसे डेसिबल (Decibels)/db में मापा जाता है।

अधिस्वरक (Overtones) या अनुनादी आवृत्तियाँ (Resonance Frequencies) ध्वनियों के लिए बहुत महत्वपूर्ण होते हैं। ये अधिस्वरक में Fo की गुणज (Multiples) होती है। बहुत सारे अधिस्वरकों में शुरू के 3-4 अधिस्वरक ध्वनियों को भिन्न करने के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। ध्वनियों के उच्चारण में ये 3-4 आवृत्तियाँ एक साथ ध्वनित होती हैं। विशेष रूप से स्वर के उच्चारण में। इन्हीं 3-4 अधिस्वरकों में अंतर के कारण हम स्वरों को अलग-अलग सुनते हैं। इन अनुनादी आवृत्तियों (Resonance Frequencies) को आवृत्ति बैंड (Formants) कहते हैं। प्रथम तीन आवृत्ति बैंड - f1, f2, f3 निम्न तीन गुणों से एक-एक का संबंध रखते हैं-

f1 - वाक्-पथ (Vocal Tract) के खुलेपन से
f2 वाक्-पथ में अग्र-पश्च भेद से
f3 उच्च व ओठों की स्थिति से

f1 - स्वरों में जैसे इ, ई, उ, ऊ, में कम होता है जैसे पुरुष में 400 Hz और नीचे स्वर 'आ' में 700 Hz
f2 - पश्च स्वरों (उ, ओ,) के उच्चारण में f2 नीचे होता है जैसे 1100Hz और अग्र स्वरों में ऊँचा होता है जैसे 1400Hz
f3 - ओष्ठो की स्थिति को बताता है। वर्तुलित स्वरों में f3 नीचे होता है, अन्यथा ऊपर होता है ये तीनों आवृत्ति बैंडों (Formants) में देखे जा सकते हैं। जैसे हिंदी के निम्न वाक्य के स्पेक्ट्रोग्राफ या औसिलोग्राफ में -

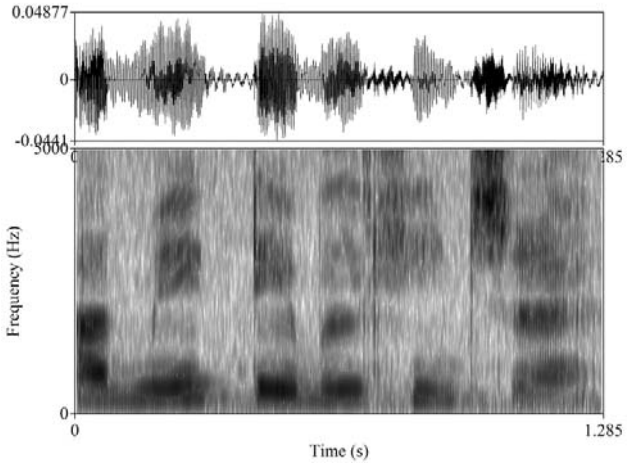

आदमी एक टेबुल खींच रहा है। /a:dmi: e:k ʈe:bul kʰĩ:ʧ rəha: hæ:/

श्रवणात्मक स्वनविज्ञान (Auditory Phonetics)

श्रवणात्मक स्वनविज्ञान शाखा का क्षेत्र, उच्चारणात्मक स्वनविज्ञान और भौतिक स्वनविज्ञान की तुलना में अस्पष्ट और विकासशील है। फिर भी इस विद्या के महत्व का भाषाविज्ञान और स्वनविज्ञान में कम नहीं समझा जाना चाहिए। उदाहरणत: निम्न बातों पर ध्यान दें- किसी भी ध्वनि के उच्चारण में विभिन्न व्यक्ति या एक ही व्यक्ति के मुख के अलग आकार हो सकते हैं, जैसे तालु से जबड़े की दूरी में थोड़ा बदलाव आ सकता है या होठों को ज्यादा कड़े या नर्म तरह से रखा जा सकता है। फिर भी मुख की इन विभिन्न स्थितियों में होने के बावजूद हम उन्हें पहचान लेते हैं जैसे 'ई' या 'फ'। (आप इन ध्वनियों के उच्चारण में मुख के आकार में थोड़ी-थोड़ी भिन्नता लाकर इस बात को देख सकते हैं।)

भाषिक ध्वनियाँ परिवेश की कई अन्य ध्वनियों के साथ सुनाई देती हैं लेकिन हम भाषा की ध्वनियों को अन्य ध्वनियों से अलग कर लेते है।

इन बातों पर ध्यान देने पर पता चलता है कि श्रवणात्मक स्वनविज्ञान भाषा की हमारी क्षमता को समझने के लिए कितना महत्वपूर्ण है।

5. निष्कर्ष

वाक् का अध्ययन भाषा के अध्ययन का अभिन्न भाग है। स्वनिक इकाइयों और प्रक्रियायों के दो मुख्य प्रकार हैं- खंडात्मक और रागीय (Prosodic) वाक् के अध्ययन के दो मुख्य स्तर हैं- स्वनविज्ञान और स्वनिमविज्ञान। स्वनविज्ञान के तीन मुख्य भाग हैं- उच्चारणात्मक स्वनविज्ञान, भौतिक स्वनविज्ञान और श्रवणात्मक स्वनविज्ञान।